भारतीय शोध-प्रविधि

एक परिचय (**डॉअमित कुमार दूबे**)

शोध-प्रविधि का अर्थ तथा उद्देश्य

- शोध-प्रविधि वह विशिष्ट प्रक्रिया या तकनीकी है जिसका उपयोग हम विषय के चुनाव, पहचान, प्रक्रिया और विश्लेषण के लिए करते हैं
- शोध-प्रविधि, पाठक को किसी अध्ययन की वैधानिकता और विश्वसनीयता के मूल्यांकन की अनुमति देती है
- शोध-प्रविधि का उद्देश्य किसी अनुसंधानकर्ता के शोध उद्देश्य तथा दृष्टिकोण की तार्किक व्याख्या करना है
- शोध-प्रविधि में न केवल हम विषय की व्याख्या या उसके तकनीकी पक्षों का मूल्यांकन करते हैं अपितु जिस उपकरण का प्रयोग करते हैं उसका भी मूल्यांकन करते हैं

शोध-प्रविधि के महत्वपूर्ण अंग

- अनुसंधान की तर्कसंगतता (गुणात्मक और परिमाणात्मक)
- शोध-व्यवस्था (Research Setting)
- आकड़ों और तथ्यों को चुनने की प्रणाली तथा प्रक्रिया
- तथ्यों के विश्लेषण की प्रणाली और प्रकिया
- शोध नीति विषयक मुद्दे

भारतीय शोध-प्रविधि की विशेषताएं तथा स्रोत

- सनातन चिन्तन में ज्ञान सबसे पवित्र वस्तु है: “न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते।”
- अयोध्या, कांची, काशी, कुण्डीनपुर, गुणशीला, तक्षशिला, नालन्दा तथा अन्य स्थान इन विभिन्न शास्त्रों, विभिन्न विद्याओं तथा विभिन्न कलाओं को सीखने-जानने का महत्वपूर्ण केंद्र माना गया।
- आयुर्वेद, षडदर्शन, व्याकरण, ज्योतिष, गणित, गान्धर्व-वेद, अभिधानकोष, अश्व-विद्या, चित्रकला, धनुर्वेद, धर्मशास्त्र, नाट्य, नृत्य, योग, रत्नपरीक्षा, राजनीति, वास्तुकला, इत्यादि विषयों पर शास्त्रों की रचनाएँ हुई
- प्राचीन भारतीय चिंतकों के बारे में सी.के. राजा कहते हैं: “सूर्य के प्रकाश के नीचे ऐसा कोई विषय ही नहीं है जिसके बारे में संस्कृत में कुछ लिखा न गया हो।

स्रोत

- 1- पाणिनि और उनके वैज्ञानिक प्रकरण के उपकरण
- 2- कौटिल्य अर्थशास्त्र और तंत्रयुक्ति
- 3- चरकसंहिता और उसके वैज्ञानिक उपकरण तथा तंत्रयुक्ति
- 4- सुश्रुत तथा तंत्रयुक्ति का उपयोग
- 5- वागभट्ट और उनके वैज्ञानिक उपकरण तथा तंत्रयुक्ति

- 6- अष्टांगहृदय तथा उसमें वर्णित वैज्ञानिक उपकरण
-
- 7- विष्णुधर्मोत्तर पुराण और तंत्रयुक्ति
-
- 8- नीलमेघ और तन्त्रयुक्ति
-
- 9- न्यायग्रन्थों के वाद
-
- 10- मीमांसा ग्रन्थों के व्याख्या नियम
-
- 11- षडदर्शन में वर्णित प्रमाण

इस व्याख्यान के विषय

- भारतीय शोध प्राविधि की विशेषताएं तथा महत्व
- तंत्रयुक्ति: वाक्यनिर्माण तथा वाक्यशुद्धि के नियम
- तंत्रदोष
- तंत्रगुण
- व्याख्या के नियम: मीमांसा तथा अन्य दर्शन
- प्रमाण: ज्ञान के साधन
- वाद (जल्प, छल, वितंडा)

तन्त्रयुक्ति का अर्थ

- तंत्रयुक्ति शब्द दो शब्दों से बना है: एक 'तन्त्र' दूसरा 'युक्ति'। तन्त्र शब्द तन् से बना है जिसका अर्थ है- फैलाना, लम्बा करना, लिखना, इत्यादि। अतः तन्त्र वह है जो विषय को विस्तार दे।

- युक्ति शब्द 'युज्' से बना है, जिसका अर्थ होता है- इकट्ठा करना, ऐक्य लाना, प्रयोग करना इत्यादि। अतः युक्ति शब्द का अर्थ हुआ - एक अनुप्रयोग, एक व्यवस्था (Arrangement), एक उपकरण।

- आयुर्वेद के बहुत सारे ग्रंथों के शीर्षक का अन्त 'तन्त्र' शब्द से होता है। बहुत से ग़ैर-आयुर्वेदिक ग्रंथों के नाम में भी तन्त्र लगा मिलता है।

- तन्त्रयुक्ति का मोटा-मोटा अर्थ लिया जाय तो वैज्ञानिक, तार्किक ढंग से किए कार्यों को तन्त्रयुक्तिपूर्ण कार्य कहा जाएगा।

आचार्य पाणिनि द्वारा निर्देशित तंत्रयुक्ति

- १- हेत्वारथ : कथन का आधार
- २- उपदेश: लेखक द्वारा उसके कार्यों में दिए गये निर्देश
- ३- अपदेश: दूसरे की राय को दर्शाना उसके खंडन के लिए
- ४- प्रति संदर्भ: cross references
- ५- समस्या अथवा विप्रतिसेध: दो समान महत्वपूर्ण विकल्प से उत्पन्न संदेह
- ६- वाक्याध्याहार : सूत्रों में उल्लिखित न्यूनपदों का समवहन
- ७- अनुमता: दूसरों के मतों का संदर्भ, स्वीकार के अर्थ में

- ८- अतिशयवर्णन: विषय का विस्तृत वर्णन
- ९- निर्वचन: शब्द का मूल अर्थ
- १०- स्वसज्ञा: अपने तकनीकी पदों का प्रयोग
- ११- पूर्वपक्ष
- १२- उत्तरपक्ष
- १३- अतिदेस: समरूप उपयोग
- १४- वैकल्पिक अनुप्रयोग

अर्थशास्त्र में तंत्रयुक्ति तथा उसके प्रयोग

- कौटिल्य अर्थशास्त्र, भारतीय राजनीति और राज्यसम्बन्धित विषयों का ग्रंथ है। इसमें 15 अधिकरण हैं, जिसमें अंतिम अधिकरण का नाम तंत्रयुक्ति है। इसमें ३२ तन्त्रयुक्तियों का उल्लेख है:

1- **अधिकरण**: जिस विषय को लेकर प्रारंभ किया जाय उसे अधिकरण कहते हैं। उदाहरणस्वरुप: “पृथ्वी के लाभ तथा पालन के संदर्भ में जितने अर्थशास्त्र पूर्वाचार्यों ने बनाये उनको एकत्र कर संक्षिप्त कर यह एक अर्थशास्त्र बनाया गया है इत्यादि

2- **विधान**: प्रकरणानुसार शास्त्र का वर्णन करना विधान कहलाता है।

3- **योग**: ‘यह ऐसा है या इस प्रकार का है’ ऐसे विशेषण से वाक्य को जोड़ने को योग कहते हैं। उदारहण- चारों वर्णों से युक्त लोग

4- **पदार्थ**: पद तथा उसके अर्थ का नाम पदार्थ है। उदाहरण : एक शब्द है मुलहर, जिसका अर्थ है पिता और पितामह की सम्पत्ति को अन्यायपूर्वक ले लेना, जब्त कर लेना। इस प्रकार व्याख्या करने का नाम अर्थ है

- 5- **हेत्वर्थ**: प्रतिपादित विषय को पुष्ट करने वाले हेतु को हेत्वर्थ कहते हैं। जैसे- धर्म तथा काम अर्थ पर ही निर्भर हैं
- 6- **उद्देश**: संक्षेप में एक बात कहने को उद्देश कहते हैं, जैसे- इन्द्रियजय पर विद्या तथा विनय निर्भर है
- 7- **निर्देश**: समस्त शब्दों के द्वारा बात कहने को निर्देश कहते हैं। जैसे- कान, त्वचा, आँख, जिह्वा, नाक, स्पर्श, शब्द, रूप, रस, गंध, की तरफ न झुकने का नाम निर्देश है
- 8- **उपदेश:** 'यह करना चाहिए' इस ढंग से कहना उपदेश है जैसे- धर्म तथा अर्थ के अनुसार काम की सेवा करनी चाहिए

- **9- अपदेश**: दूसरों के विचारों को देने का नाम अपदेश है, जैसे- मनुसंप्रदाय का मत है कि आमत्यों की संख्या 12, वृहस्पति 16, औशनस 20 की होनी चाहिए, कौटिल्य का मत है कि 'यह संख्या सामर्थ्य अनुसार हो'
- 10- **अतिदेश**: उक्त बात को सूचित करना अतिदेश कहलाता है जैसे- दत्त वस्तु के न देने के संबंध में ऋणदान विषयक नियम ही लगते हैं
- 11- **प्रदेश**: वक्रव्य (आगे कही जाने वाली) बात से किसी बात को सूचित करना प्रदेश कहलाता हैं जैसे- साम, दान, दण्ड, भेद के द्वारा वैसा करना चाहिए जैसा की आपत्ति प्रकरण में कहा जाय
- 12- **उपमान**: इष्ट से अदृष्ट का साधन उपमान कहलाता है, जैसे- जिनके राज्यकर मुक्त होने का समय ख़त्म हो गया हो उनपर पिता के सदृश अनुग्रह करे।

- 13- **अर्थापत्ति**: अर्थात् करके अनुक्त बात को जानना अर्थापत्ति कहलाता है। जैसे- संसार के व्यवहार में कुशल लोग इष्ट-मित्रों के द्वारा शक्तिशाली राजा के पास पहुचे। अर्थात अनिष्ट लोगों के द्वारा उसके पास न पहुंचे वह तो इसी से निकल आया
- 14- **संशय**: एक ही बात जब दो ओर एक समान लगे तो उसको संशय कहते हैं
- 15- **प्रसंग**: प्रकारांतर से किसी बात का किसी के समान प्रकट करने का नाम प्रसंग है, जैसे- कृषि-कर्म के लिए दी गयी भूमि में पूर्ववत समझना चाहिए
- 16- **विपर्यय**: विपरीत बात से पुष्ट करने का नाम विपर्यय है।
- 17- **वाक्यशेष**: जिस बात से वाक्य समाप्त होता है उसको वाक्यशेष कहते हैं, जैसे- पंखहिन की तरह राजा की गति नष्ट हो जाती है। इसमें 'पक्षी' वाक्यशेष है

- 18- **अनुमत:** अप्रतिसिद्ध वाक्य को अनुमत कहते हैं जैसे औशनस के अनुसार – पक्ष, अग्रभाग और संरक्षित भाग- व्यूह के तीन विभाग हैं
- 19- **व्याख्यान**: विशेष रूप से कहने का नाम व्याख्यान है
- 20- **निर्वचन**: गुण दिखाकर शास्त्र की व्याख्या करने का नाम निर्वचन है, जैसे- राजा को कल्याण के मार्ग से दूर फेकने व्यस्यति (इति व्यसन) के कारण ही व्यसन को व्यसन कहा जाता है
- 21- **निदर्शन**: दृष्टान्तयुक्त दृष्टान्त को निदर्शन कहते हैं
- 22- **अपवर्ग**: अनिष्ट बात को पृथक करने का नाम ही अपवर्ग है जैसे- दुश्मन की सेना को अपनी सरहद रहने दें किन्तु इस शर्त पर कि देश में ग़दर होने की संभावना न हो

- 23- **स्वसंज्ञा**: अन्य लोगों से भिन्न अर्थ में शब्द के प्रयोग करने को स्वसंज्ञा कहते हैं
- 24- **पूर्वपक्ष**: प्रतिषेधव्य वाक्य को पूर्वपक्ष कहते हैं
- 25- **उत्तरपक्ष**: निर्णय करने वाले वाक्य को उत्तरपक्ष कहते हैं
- 26- **एकांत**: सब अवस्थाओं में एकसदृश लगने वाले नियम को 'एकांत' कहते हैं, जैसे- राजा को सदैव ही तैयार रहना चाहिए
- 27- **अनागतावेक्षण**: आगे कही गयी बात की ओर ध्यान खीचने का नाम अनागतावेक्षण है
- 28- **अतिक्रांतावेक्षण**: पीछे कही गयी बात की ओर ध्यान खीचने का नाम अतिक्रांतावेक्षण है

- 29- **नियोग**: ऐसा कहना चाहिए, ऐसा नहीं कहना चाहिए, इस ढंग की बात को नियोग कहते है
- 30- **विकल्प**: विकल्प इससे या उससे इस ढंग की बात करना विकल्प कहलाता है
- 31- **समुच्चय**: इसके लिए या उसके लिए इस ढंग से कहने का नाम समुच्चय है

- 32: **उह्य**: अनुक्त बातों को सोच लेना उह्य है

अन्य ग्रंथों में तंत्रयुक्तियों की संख्या

- चरकसंहिता आयुर्वेद का एक महत्वपूर्ण ग्रन्थ है। यह एक ऐसा ग्रन्थ है जिसमें, ज्ञान की विभिन्न शाखाएँ जैसे- सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, वेदान्त, मीमांसा, चार्वाक के ऊपर भी कार्य है। इसीलिये इसे अखिलशास्त्रविद्याकल्पद्रुम भी कहा गया है।

- चरक संहिता में 36 तन्त्रयुक्तियों का ज़िक्र है।

- सुश्रुतसंहिता शल्य-चिकित्सा का अद्भुत और प्राचीन ग्रन्थ है। जो आचार्य धन्वन्तरि और आचार्य सुश्रुत के बीच संवाद के रूप में लिखा गया है। वर्तमान पुस्तक आचार्य नागार्जुन द्वारा पुनः संकलित की गयी। इस ग्रन्थ में 32 तंत्रयुक्तियों का उल्लेख है।

- वागभट्ट ने आयुर्वेद के दो ग्रन्थ लिखे: एक अष्टांगसंग्रह तथा दूसरा अष्टांगहृदयम। इन्होंने आचार्य चरक की दो तंत्रयुक्तियों के नामों में परिवर्तन किया। अनागतावेक्षा तथा संनियोग के स्थान पर अनागतापेक्षा और नियोग किया।

तंत्रयुक्ति के प्रयोग

- अतिक्रांतावेक्षण (Retrospection)
- पर्यायवाची - अतीतावेक्षा और अतीतापेक्षा इसके पर्यायवाची हैं। शब्द का अर्थ है- बीते हुए कार्य या अनुभव को देखना। अर्थात् यह भूतकाल के कथन को इंगित करता है।

- परिभाषा- यथाविध्यनुप्रयोग: पूर्वस्मिन (पाणिनि-अष्टाध्यायी) अर्थात् इसे ऐसे लिया जाय जैसा पिछले सूत्र में प्रयोग हुआ है।
- अर्थ- इसमें दो तरह के अर्थ आते हैं: प्राथमिक अर्थ तथा अन्य अर्थ।
- प्राथमिक अर्थ में - जैसा पहले कहा जा चुका है।
- अन्य अर्थ- १-केवल विषय के संदर्भ में जो पहले व्याख्यायित किया गया है। २-वर्तमान विषय को सिद्ध करने के लिए पीछे का निर्दशन करना।

कार्य- १-किसी वृहद् विषय के मुख्य शीर्षक को उसके उपशीर्षक या विषयों से जोड़ना

२- किसी एक विषय पर बार-बार बहस से बचना

३- पाठक से यह अपेक्षा रखना कि वह विषय को ध्यानपूर्वक पढ़े, क्योंकि उसे पिछे से भी जोड़ा जा रहा है।

अनुप्रयोग- ये ग्रंथों में बार बार देखे जा सकते हैं।

तंत्रदोष

- 1- अप्रसिद्धशब्दं : ऐसे शब्दों का प्रयोग करना जो प्रसिद्ध न हों, प्रचलन में न हों
- 2- दु:प्रणीतम : ऐसे कार्य जो सूत्र और भाष्य के उद्देश्य को ही गलत ढंग से बता रहे हों, खराब ढंग से लिखे गए कार्य
- 3- असंगतार्थम: बिना संगति के कार्य अर्थात दो कथनों, बातों में कोई तारतम्यता न हो
- 4- असुखारोहिपदम: ऐसे शब्दों का प्रयोग जिनका उच्चारण कठिन हो तथा कर्णप्रिय न हो
- 5- विरुद्धम : जो विरुद्ध हो, सुसंगति न हो
- 6- अतिविस्तृतम: किसी विषय का तार्किक तथा स्वीकार्य सीमा से अधिक वर्णन करना

- 7- अतिसंक्षिप्तम : किसी विषय को बहुत कम तथा अपर्याप्त शब्दों में वर्णित करना
- 8- अप्रयोजनम : किसी कार्य के उद्देश्य और उपयोगिता को स्पष्ट न करना
- 9- भिन्नक्रमम : बिना किसी विशिष्ट उद्देश्य के क्रम भंग करना
- 10- संदिग्धम : संशयग्रस्त, अस्पष्ट, अपरिभाषित
- 11- पुनरुक्तम: किसी एक विषय या बिंदु का बार-बार दोहराते हुए वर्णन करना

12- निःप्रमाणकम : बिना किसी आधार या प्रमाण के व्याख्या करना

13- असमाप्तार्थम : किसी विमर्श या विषय को बीच में ही छोड़ देना

14- अपा (न) र्थकम

15- व्याहतम: व्याघाती कथनों को रखना

तंत्रगुण

- 1- अकष्टशब्द तंत्रगुण: ऐसे शब्दों का प्रयोग जिनके अर्थ गलत न हों, जिन्हें समझना कठिन न हो तथा कर्णप्रिय हों
- 2- अनवपतितशब्द तंत्रगुण: ऐसा ग्रन्थ जो व्याकरण की दृष्टि से ठीक हों, द्वन्दहिन हों, समझना आसान हो तथा अप्रचलित शब्दों का प्रयोग न हो
- 3- अपगतपुनरुक्त तंत्रगुण: ऐसे ग्रन्थ जिनमें विषय तथा उपविषय की पुनरावृत्ति न हो, क्योंकि यह लेखक की बौद्धिक अक्षमता को दर्शाता है।
- 4- अर्थतत्वविनिश्चयप्रधान तंत्रगुण: विषय के वास्तविक तथा मूल स्वभाव को सपष्ट ढंग से रखने की कला। विषय के मूल बिंदु को स्पष्टता और दृढ़ता से रखने की कला

- 5- अर्थबहुल तंत्रगुण: ऐसा ग्रन्थ जो पारम्परिक दृष्टि के साथ-साथ उन विचारों को भी रखे जिसने लेखक को प्रभावित किया। ऐसे ग्रन्थ पाठकों के मस्तिष्क को वैचारिक भोजन प्रदान करते हैं जो उस विषय के भविष्य के लिए अच्छा होता है

- 6- असंकुलप्रकरण तंत्रगुण: ऐसा ग्रन्थ जिसमें विषय, विभाग- अनुभाग में बटें न हों। यदि हों भी तो विपरीत हों

- 7- आप्तजनपूजित तंत्रगुण: ऐसा ग्रन्थ जो उच्च शिक्षित साख वाले लोगों के बीच सम्माननीय हो

- 8- आर्ष तंत्रगुण: ऋषियों द्वारा संपादित ग्रन्थ
- 9- आशुप्रबोधक तंत्रगुण: यह बात हमेशा मस्तिष्क में रखना कि वामन का कार्य काव्य में वैज्ञानिक कार्य का मानक है
- 10- उदाहरणवत तंत्रगुण- ऐसा ग्रन्थ जिसमें प्रचुर ढ़ंग से उपयुक्त और अर्थपूर्ण उदाहरण दिए गए हों, पार्याप्त सैधांतिक विषय हों
- 11- क्रमागतार्थ तंत्रगुण: (i) आरम्भ से अंत तक विषयों और उपविषयों में एक प्रकार के तरीके का अनुसरण करना (ii) विभिन्न विषयों का वर्णन उनके गहरे अर्थों में करना (iii) विभिन्न विषयों का विचार करते समय उनके संबंध, उनके अंतर्संबंध तथा उनके उपयुक्त स्थान का ध्यान रखना

- 12- त्रिबिधशिष्यबुद्धिहित गुण: यह तीन प्रकार के होते हैं:
- (i) those who are blessed with a very sharp intellect, called तीव्रबुद्धि शिष्य, (ii) those who possess a mediocre intellect, called मंदबुद्धि शिष्य and (iii) those who have a very ordinary intellect, called अल्पबुद्धि शिष्य

- 13- धीरपुरुषासेवित तंत्रगुण: ऐसे ग्रन्थ जिन्हें संयत, अध्ययनशील, उच्चकोटि के बुद्धिमान मनुष्य संदर्भ ग्रन्थ के रूप में प्रयोग करते हैं तथा अपने पास रखते हैं। जिनका प्रयोग अपने ग्रंथों को लिखने, अध्ययन करने, अध्यापन करने, शोध करने आदि के लिए प्रयोग करते हैं

- 14- पुष्कलाविधान तंत्रगुण- ऐसे ग्रन्थ जिनमें (i) अनेक तकनीकी पद हों (ii) उनके पर्यायवाची हों (iii) वैज्ञानिक शब्दों की व्याख्या उनके सिद्धांत हों

- 15- लक्षणवत तंत्रगुण: लक्षणवतशास्त्र ग्रन्थ उन्हें कहते हैं जो अव्याप्ति, अतिव्याप्ति और असंभव दोष से रहित हो
- 16- संग्तार्थ तंत्रगुण: जब विषय और उपविषय एक दूसरे से सुसंगत ढ़ंग से जुड़े हो, उनके विमर्श तार्किक रूप से स्वास्थ हों। ऐसे कार्यों में पूरी क्रमबद्धता होती है
- 17- सुप्रणितसूत्रभाष्यसंग्रहकम तंत्रगुण: (i) सूत्र जब विचार-विमर्श के बाद लिखे हों (ii) जिसमें पश्च-टिप्पणियाँ हों जो विषयों को सपष्ट करती हैं (iii) शीर्षक तथा उपशीर्षक क्रमबद्ध हों
- 18- सुम्हद्सवी तन्त्रगुण: ऐसा कार्य जो सफल और महान समझे जाते हैं। जिनका प्रयोग अध्ययन करने वाले अपनी कठिनाई दूर करने के लिए करते हैं
- 19- स्वाधार तंत्रगुण: ऐसे ग्रन्थ जो पुराने मानक ग्रन्थ पर लिखे गए हों

18- सुम्हद्सवी तन्त्रगुण: A work which is considered great and successful (or rather authoritative); a work which eminent writers select for their study and for the clarification of their difficulties.

19- स्वाधार तंत्रगुण: A treatise that draws on old standard works

वाद परम्परा

Art of Debate and Discussion

वाद का अर्थ तथा विशेषताएं

- वाद, वद शब्द से बना है! जिसका अर्थ होता है – बोलना
- वाद का अर्थ हुआ सत्य तक पहुँचने के लिए उपयुक्त तार्किक प्रकिया
- भगवद्गीता में भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं **“अध्यात्मविद्या विद्यानं वादः प्रवदतामहम**” कि मैं विद्याओं में अध्यात्मविद्या तथा परस्पर विवाद करने वालों का तत्व-निर्णय के लिए किया जाने वाला “वाद” हूँ। अर्थात, वाद स्वयं एक ‘विभूति’ है
- वाद-विहिन समाज कभी भी सत्य के विभिन्न स्वरूपों तक नहीं पहुँच सकता
- वाद परम्परा की वजह से एक साथ कई दर्शन इस समाज में प्रतिष्ठित हो सके

वाद-मार्ग

- शास्त्रों में वाद करने के जो नियम या चरण बताये गए हैं, उन्हें ही वाद मार्ग कहते हैं:
- द्रव्य, गुण, विशेष, सामान्य और समवाय को भी कभी इसमें सम्मलित किया जाता है
- १- **वाद :** जब दो समूहों के बीच किसी ग्रन्थ या विषय के पक्ष-विपक्ष पर विमर्श या विवाद हो तथा विमर्श का उद्देश्य सत्य का अन्वेषण हो तो यह वाद कहलाता है। वाद की प्रक्रिया में सामान्यतः जल्प और वितंडा का प्रयोग हो जाता है। जिसका हम अलग से जिक्र करेंगे।
- **२- प्रतिज्ञा :** प्रतिज्ञा, वह कथन है जिसे स्थापित करना होता है। जैसे: आत्मा शाश्वत है।

- **३- स्थापना :** तार्किक प्रक्रिया द्वारा प्रतिज्ञा की स्थापना करना जिसमे कारण, उदाहरण, निष्कर्ष आदि आते हैं I
- **४- प्रतिस्थापना** : प्रति-स्थापना का तात्पर्य पूर्व में की गयी स्थापना के विपरीत कथन I
- **५- हेतु :** हेतु, ज्ञान का आधर है जैसे प्रत्यक्ष, अनुमान, ऐतिह्य औपम्य आदि I
- **६- उपनय तथा निगमन :** उदाहरण का उपयोग तथा अपने तर्क के आधार पर निष्कर्ष I
- **७- उत्तर :** प्रतिस्थापना में स्थापित प्रतिज्ञा को उत्तर कहते हैं I

- **८- दृष्टांत :** दृष्टान्त ऐसा तथ्य है जिसमें एक साधारण मनुष्य तथा एक विशेषज्ञ समान राय रखते हों I जैसे अग्नि गर्म है, पृथ्वी स्थिर है इत्यादि I यह बात सूक्ष्म से सूक्ष्म विषय के चिंतन की पराकाष्ठा दर्शाती है I

- **९- सिद्धांत :** ऐसा सत्य जिसे विशेषज्ञों ने परीक्षित करके तथ्यों के साथ रखा हो, जो किसी न किसी समूह को स्वीकार्य हो I

- **१०- शब्द :** अक्षरों का समूह शब्द कहलाता है हालाँकि ये चार प्रकार के होते हैं I

- **११- प्रत्यक्ष :** ऐसा ज्ञान जिसे मनुष्य अपने इन्द्रियों तथा मन के समन्वय से सीधे प्राप्त करता है I

- **१२- अनुमान :** ऐसा ज्ञान जो विभिन्न तर्कों को जोड़ते हुए तर्क पर आधरित है I
- **१३- औपम्य या उपमान :** ऐसा ज्ञान जो वस्तु और सूचना की सादृश्यता पर निर्भर हो I
- **१४- ऐतिह्य :** विश्वासप्रद स्रोत पर आधरित ज्ञान जैसे वेद I
- **१५- संशय :** संशय का तात्पर्य अनिश्चितता तथा संदेह से है I
- **१६- प्रयोजन :** तर्क बिना किसी प्रयोजन के स्वीकार्य नहीं है I अर्थात सिर्फ तर्क के लिए तर्क करना गलत है तथा मान्य नहीं है I

- **१७- सव्यभिचार :** अपने सिद्धांत पथ हट जाना, गुमराह करना I यह दोष है जो सामन्यतः दिखता है I
- **१८- जिज्ञासा :** यहाँ तात्पर्य तथ्य की परीक्षा से है I
- **१९- व्यवसाय :** यह एक निश्चितता है I जैसे: यह बीमारी पेट में हवा के परिवर्तन के कारण हुई है और यह उसकी दवा है I
- **२०- अर्थ-प्राप्ति :** किसी दूसरी बात की घोषणा से उत्पन्न ज्ञान अर्थ-प्राप्ति की कोटि में आता हैI

- **२१- संभव :** ऐसा विषय जिससे किसी दूसरी वस्तु की उत्पत्ति होती है I
- **२२- अनुयोज्य :** ऐसा भाषण या कथन जो दोषों से भरा हुआ हो I
- **२३- अनानुयोज्य :** यह अनुनोज्य के विपरीत कथन या भाषण है I
- **२४- अनुयोग :** अनुयोग किसी विषय का उस विषय के विद्वान द्वारा अनुसन्धान है
- **२५- प्रत्यानुयोग :** किसी अनुसन्धान का पुनः अनुसंधान करना प्रत्यानुयोग है

- **२६- वाक्-दोष :** वाक्-दोष ऐसे कथनों को कहते हैं जिसमें:
- (अ) अपर्याप्तता या बहुत कम बोलना जब विषय को उदाहरण के साथ कहना हो I
- (आ) अतिरेक करना या अत्यधिक बोलना जहाँ कम बोलने की आवश्यकता हो I
- (इ) निरर्थक शब्दों तथा अक्षरों का चयन I
- (ई) असंगत, शब्दों का ऐसा समूह जो कोई अर्थ प्रदान नहीं कर रहे हों I
- (उ) अंतर्विरोध- अपनी बातों और उदाहरण के बीच अंतर्विरोध I

- **२७- वाक्य-प्रशंसा :** जब कोई भाषण या कथन ऊपर उल्लेखित की गयी अशुद्धियों से मुक्त हो तो ऐसे कथन वाक्य-प्रशंसा की श्रेणी में आते हैं।
- **२८- छल :** ऐसे कथन जिसमें शब्दों के साथ खेलते हुए उनके अर्थ को बदल देना छल कहलाता है। अर्थात शब्द के आशय को बदल देना।
- **२९- अहेतु :** अहेतु तीन तरह के होते हैं:
- (अ) प्रकरण-समा- यह उधार के प्रश्न लेने की प्रक्रिया है अर्थात जिसे सिद्ध करना है जैसे आत्मा शाश्वत क्योंकि यह भौतिक शरीर से अलग है।
- (आ) समस्या-समा- संदेह के आधार पर कोई धरना बनाना। जैसे यह संदेहास्पद है कि कोई व्यक्ति जो औषधि विज्ञान पढ़ रह है वो चिकित्सक हो।
- इ) वर्ण्य-समा- जब प्रश्नचिह्न के मामले में उदाहरण, विषय से अलग न हो अर्थात वक्ता द्वारा विषय को संतुलित करने का कार्य किया जा रहा हो।

- **३०- अतीत-काल :** यह दोष तब उत्पन्न होता है जब किसी बात को पहले बोलना हो तो बाद में बोला जाये तथा जिसे बाद में बोला जाये उसे पहले बोलना चाहिए I
- **३१- उपलंभ :** तर्क दोष होने का अभियोग लगाना I
- **३२- परिहार :** जब दोष को दूर किया जाता है तो परिहार कहा जाता है I
- **३३- प्रतिज्ञा-हानि :** जब प्रतिवादी पर बौद्धिक प्रहार के कारण वह अपनी प्रतिज्ञा छोड़ देता है अर्थात जिस विषय को सिद्ध करना हो उसे छोड़ देता है I

- **३४- अभ्यनुज्ञा :** व्यक्ति द्वारा उसके प्रतिवादी ने जो कुछ कहा उसे स्वीकार कर लेना यद्यपि वह स्वीकार्य करने योग्य हो या न हो I
- **३५- हेत्वांतर :** हेत्वांतर का तात्पर्य है जब स्पष्ट और सुसंगत तर्क के स्थान पर दूसरे तर्क का प्रयोग I
- **३६- अर्थान्तर :** वाद के विषय को बदलने की कोशिश करना I
- **३७- निग्रहस्थान :** निग्रहस्थान वह स्थान है जहाँ प्रतिवादी की हार घोषित की जाती है I इसमें विषय बदलना, अपने ही स्थापना का खंडन, इत्यादि I इसकी बृहद चर्चा अलग से है I

अशुद्ध, अतार्किक वाद या विमर्श

- भारतीय परम्परा में न केवल शुद्ध तार्किक प्रक्रिया का वर्णन है अपितु ऐसे भी संवादों का जिक्र है जो अशुद्ध हैं किन्तु सामान्यतः हमे समझ में नहीं आता

- इसका वर्गीकरण है जिसमें प्रमुख रूप से:

- जल्प
- वितंडा
- छल
- हेत्वाभास
- जाति

जल्प

- ऐसा संवाद या तर्क जिसमें तर्क करने वाला सिर्फ जीतने के उद्देश्य से तर्क करता है।
- इसमें इस बात का कोई ध्यान नहीं रखता है कि जो तर्क वह प्रस्तुत कर रहा है, वह उसकी बात को पूर्ण समर्थन दे रहा है या नहीं।
- क्योंकि उसका उद्देश्य सिर्फ जीत हासिल करना है न कि सत्य का अन्वेषण करना। यह जल्प है

वितण्डा

- वितण्डा ऐसी विधा है जिसमे वादी सिर्फ प्रतिवादी पर प्रहार करता है उसके तर्कों का खंडन करता है।

- इसमें वितंडी का कोई खुद का पक्ष नहीं होता है जिसे वह स्थापित करना चाहता है

- अपितु वह केवल खंडन करता है अपना कोई सिद्धांत नहीं रखता।

- आजकल वितंडा का चलन बहुत बढ़ गया है।

छल

- छल का तात्पर्य है कि इसमें प्रतिवादी द्वारा दिए गए तर्कों के शब्दों का अर्थ बदल देना।

- आशय समझते हुए भी अर्थ, वाक इत्यादि का छल करना

- छल का वर्गीकरण तीन भाग में किया गया है:
- वाक-छल
- सामान्य-छल
- उपचार-छल

जाति

- मात्र समानता अथवा असमानता के आधार पर किया जाने वाला तर्क जाति कहलाता है
- इसका कोई ठोस तार्किक आधार नहीं होता
- कोई एक वस्तु ऐसी है अतः दूसरी वस्तु भी ऐसी ही होगी, यह इसका आधार है

मीमांसा में व्याख्या के नियम

- मीमांसा दर्शन को ग्रंथों की व्याख्या के लिए जाना जाता है
- जैमिनी-सूत्र में दिए गए नियमों सबर और सायण ऋषि ने व्याख्यायित किया
- जिसे बाद में कुमारिल और प्रभाकर ने और विकसित किया
- प्राथमिक रूप से इन नियमों का प्रयोग वेदों की व्याख्या के लिए किया गया है
- अन्य ग्रन्थों के लिए भी इसका प्रयोग किया जा सकता है

व्याख्या के छः स्तरीय दृष्टिकोण

- १- अधिकरण का तात्पर्य पूर्ण तर्क है जो निम्नलिखित वैज्ञानिक शोधप्रविधि का अनुसरण करे!
- २- ग्रन्थ तथा विषय की अच्छी समझ
- ३- संभावित संशयों की जागरूकता, विशेषकर अर्थ संबंधित
- ४- किसी ग्रन्थ पर विचार करते समय उसके विरोधी दृष्टियों पर विचार तथा उनका प्रत्युत्तर
- ५- पक्ष तथा विपक्ष दोनों का मूल्याँकन के बाद व्याख्याता का निर्णय
- ६- अंतत: निष्कर्ष स्थापित करना

व्याख्या के प्राथमिक सिद्धान्त

- i- सार्थक्य: भाषा का प्रत्येक अंग चाहे वह शब्द हो अथवा वाक्य अर्थपूर्ण तथा विशेष उद्देश्य से संबंधित होना चाहिए।
- ii- लाघव: पर्याप्त से अधिक नियमों की कल्पना या स्वीकार नहीं करना चाहिए।
- iii- अर्थैकता: एक वाक्य तथा शब्द में ऐक्य में अर्थ होना चाहिए। द्विअर्थी नहीं होना चाहिए।
- iv- गुणप्रधानता: किसी वाक्य या शब्द के द्वितीय अर्थ को प्राथमिक अर्थ से जुड़ा होना चाहिए।
- v- सामंजस्य: वाक्य के शब्दों तथा अर्थों के बीच विरोध नहीं होना चाहिए। इसे सामंजस्य में होना चाहिए
- vi- विकल्प: विरुद्धता के स्थिति में किसी एक पक्ष को वैकल्पिक रूप में स्वीकार करना चाहिए।

श्रुति सिद्धांत

- जब कोई वाक्य अपने अर्थ और व्याकरण में पूर्ण और सुस्पष्ट होता है तो उसके अर्थ को दबाने, मोड़ने और बदलने का कोई प्रयास नहीं करना चाहिए

लिंग सिद्धांत

- जब किसी शब्द या अभिव्यक्ति के एक से अधिक अर्थ हों किन्तु उस शब्द के सामान्य या साधारण अर्थ विषय तथा संदर्भ साम्य न रखते हों! तब उसके तकनीकी अर्थ को विषय या संदर्भ के साथ निर्धारित करना लिंग सिद्धांत कहलाता है

वाक्य सिद्धांत

- जब शब्द और वाक्य सुस्पष्ट ढंग से एक-दूसरे के साथ न जुड़े हुए हों तो उन्हें अर्थपूर्ण कथन बनाने के लिए व्याकरणीय ढ़ंग से जोड़ना चाहिए! इसे वाक्य सिद्धांत कहते हैं

प्रकरण सिद्धांत

- जब कोई वाक्य या पद अपनेआप में अर्थपूर्ण न हो, भले ही उसका व्याकरणीय संरचना कितनी भी स्पष्ट हो! तो उसे विषय के संदर्भ को ध्यान में रखकर दूसरे अंश के साथ पढ़ना चाहिए जिससे वह अर्थपूर्ण हो।

स्थान

- यह किसी पाठ्यांश में शब्दों तथा वाक्यों, उपवाक्यों को उचित स्थान अथवा क्रम में रखना है। जिससे उसके सही अर्थ को प्राप्त किया जा सके।

समाख्यान

- यह अभिव्यक्त किए विचार के कई पाठ्यांशों से संबंधित है, यदि किसी वाक्य से पूर्ण अर्थ समझ में नहीं आ रहा तो एकरूप अर्थ के लिए उस हिस्से को उसमें सम्मिलित करना।

प्रमाण

ज्ञान के साधन

प्रमाणों की संख्या

- भारतीय दर्शन में छ: तरह के प्रमाणों की चर्चा है:
- 1- प्रत्यक्ष
- 2- अनुमान
- 3- शब्द
- 4- उपमान
- 5- अर्थापत्ति
- 6- अनुपलब्धि

प्रत्यक्ष

- प्रत्यक्ष ज्ञान, ऐसे ज्ञान को कहते हैं जो विषय तथा इन्द्रियों के संयोग से उत्पन्न होता है
- सीधे अनुभूत ज्ञान को प्रत्यक्ष कहते हैं
- दो तरह के प्रत्यक्ष ज्ञान की चर्चा भारतीय दर्शन में है: प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष
- इसका भेद इसकी तात्कालिकता के आधार पर होता है

सामान्य प्रत्यक्ष

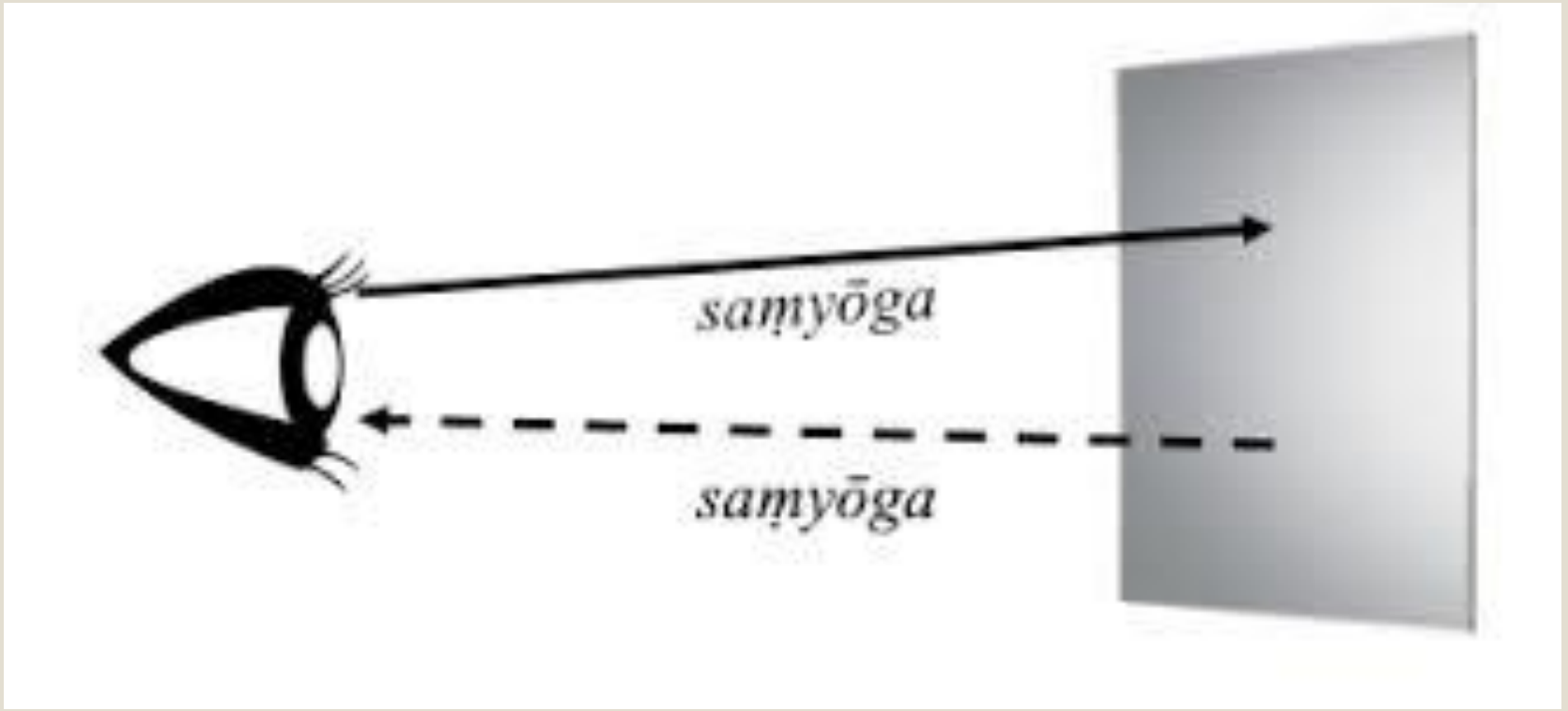

प्रत्यक्ष की प्रक्रिया

प्रत्यक्ष के प्रकार

लौकिक

- चाक्षुष
- श्रुत
- रसना
- स्पर्श
- घ्राण
- मनस

अलौकिक

- सामान्यलक्षण
- ज्ञानलक्षण
- योगज

अनुमान

- 1- पर्वत पर अग्नि है
- 2- क्योंकि वहां धूम्र है
- 3- जहाँ भी धूम्र है वहां आग है जैसे रसोईघर
- 4- पर्वत पर धूम्र है जो व्याप्ति रूप से अग्नि से जुड़ा है
- 5- इसलिए पर्वत पर अग्नि है

अनुमान के पंच अवयव

- 1- प्रतिज्ञा: जिस कथन को सिद्ध करना है जैसे पर्वत पर अग्नि
- 2- हेतु: अर्थात कारण जैसे धुआं
- 3- उदाहरण: जैसे जहाँ भी धुआं है वहां अग्नि है
- 4- उपनय या प्रयोग: जैसे पर्वत पर धुआं है जो अनिवार्य संबंध से अग्नि से जुड़ा है
- 5- निष्कर्ष: इसलिए पर्वत पर अग्नि है

शब्द प्रमाण

- आप्त कथन तथा वचन इस प्रमाण में आते हैं
- वेदों को इस प्रमाण के अंतर्गत रखा जाता है
- बहुत से वैज्ञानिक सिद्धांत तथा शोध भी इसमें आते है
- ऐसे मनुष्य जिनकी बातों में निष्ठा है, उनके वचन भी इसमें आते हैं

उपमान प्रमाण

- यह सादृश्यता का ज्ञान है
- यह दो विषयों अथवा वस्तुओं में समानता को दर्शाता है
- जैसे किसी व्यक्ति ने नीलगाय ने देखी हो किन्तु गौ देखी हो उसके आधार पर जब वह अनुमान लगाता है तो उसे उपमान प्रमाण कहते हैं
- समानता को सिद्ध करने के अलग-अलग आधार भी हो सकते हैं

अर्थापत्ति

- अर्थापत्ति उस तरह के ज्ञान को कहते हैं जब हम किसी तथ्य को व्याख्यायित करने के लिए कुछ कथा या तर्क बाहर से लेकर आते हैं
- इसमें जिस तरह की व्याख्या करनी है उसके अनुकूल पूर्वकथन को लाना, अर्थापत्ति है
- जैसे कोई व्यक्ति मोटा हो रहा है किन्तु हम जानते हैं कि दिनभर तो वह उपवास करता है, यह विरोधाभास बात है! क्योंकि उसका मोटा होना और उसका उपवास करना विरोधाभास है। तब हम यह मान लेते हैं कि वह रात में खाता होगा

अनुपलब्धि

- अनुपलब्धि किसी वस्तु अथवा विषय के न होने का तात्कालिक ज्ञान है
- जैसे मेज पर जग न होने का ज्ञान हमें प्रत्यक्ष देखने से चलता है लेकिन यह अभावात्मक ज्ञान है
- इस अभावात्मक ज्ञान के स्रोत को अनुपलब्धि या आभाव भी कहते हैं

THANK YOU